International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493, Impact Factor: RJIF 5.46
Received: 30-05-2021, Accepted: 14-06-2021, Published: 29-06-2021
Volume 3, Issue 2, 2021, Page No. 45-48

स्वतंत्रता व विरोध के संदर्भ में उपन्यासकारों का योगदान

पार्वती
हिंदी विभाग, ओ पी जे एस, विश्वविद्यालय, चुरू, राजस्थान, भारत

सारांश
भारतीय इतिहास की तरफ देखे तो समाज को सुधारने और देश को परतंत्रता की जंजीरों से मुक्ति दिलाने के प्रयास में जो भाव छिपा था, उसे राष्ट्रीय चेतना कहते हैं। अपने लोगों, अपनी संस्कृति, अपनी प्रकृति से जो प्रेम का भाव होता है, वहीं राष्ट्रीय चेतना है। अपने राष्ट्र के लिए एक समर्पण का भाव इसमें अंतर्निहित होता है। यह भाव जब पूरे देशवासियों में होता है तो वहाँ सहयोग और सहानुभूति पनपती है। दरअसल यह केवल राष्ट्र के प्रति प्रेम ही नहीं, मानव की अस्मिता की पहचान भी है। पुराने ज़माने में भारत छोटे–छोटे राज्यों में बँटा हुआ था। एक ही राजा की प्रजा होने के एहसास से ही भारत में राष्ट्रीय चेतना की शुरुआत हुई होगी। आधुनिक काल में अंग्रेजों के आगमन से इसका विस्तार बढा, जिसका परिणाम हमें 1857 के मुक्ति संग्राम में देखने को मिलता है। इसके बाद अंग्रेजों ने पाश्चात्य शिक्षा को बढ़ावा दिया। अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा देने का उद्देश्य ऐसी जनता को बनाना था जो दिखने में हिंदुस्तानी हो पर सोच से अंग्रेज हो। लेकिन इस शिक्षा का दूसरा फायदा यह हुआ कि अंग्रेजी पढ़ने से भारतीय दूसरे देशों के इतिहास, संस्कृति से परिचित होने लगे। वे विश्व के दूसरे देशों से अपनी तुलना करने लगे, दूसरे देशों की क्रांतियों की जानकारी भी उन्हें मिलने लगी। इससे उन्हें अपनी अस्मिता की पहचान होने लगी। इस समय समाज में कई समाज सुधारकों का आविर्भाव हुआ। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद कुछ भारतीय अपने देश को परतंत्रता की जंजीरों से मुक्त कराने के लिये आगे आए। साहित्यकारों ने भी इसमें बढ़–चढ कर भाग लिया। हिंदी के साहित्यकार भी इसमें पीछे नहीं रहे। कहानी की विधा में प्रेमचंद का नाम तो सबसे ऊपर आता है। प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं के माध्यम से अपने समय के मुक्ति संग्राम में पूरी तरह से अपना योगदान दिया। प्रेमचंद गांधी जी से बहुत अधिक प्रभावित थे। उनके भाषण को सुनकर उन्होंने अपनी आर्थिक समस्या को नजरअंदाज करते हुए सरकारी नौकरी के पद से इस्तीफा दे दिया था। गांधीजी चाहते थे कि इस मुक्ति संग्राम में पुरुषों के कदम से कदम मिलाकर स्त्रियां भी भाग ले। प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में गांधीजी के इन भावों को प्रकट करने का प्रयास किया। प्रेमचंद ने स्त्रियों को आगे लाने के लिए ऐसे पात्रों की सृष्टि की जिससे स्त्रियों में राष्ट्रीय चेतना का संचार हो जैसे :– रानी सारंधा, सती आदि कहानी के पात्र।

मूल शब्दः स्वतंत्रता, विरोध, हिंदी शिक्षण, हिंदी उपन्यासकार

प्रस्तावना

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के हिन्दी नाटक और रंगमंच को सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का योगदान सराहनीय है। हिन्दी नाटक की जड़ता के खिलाफ रचनात्मक संघर्ष का जो दौर मोहन राकेश ने प्रारंभ स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के हिन्दी नाटक और रंगमंच को सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का योगदान सराहनीय है। हिन्दी नाटक की जड़ता के खिलाफ रचनात्मक संघर्ष का जो दौर मोहन राकेश ने प्रारंभ किया था उसे सर्वेश्वर ने आगे बढ़ाया। डॉ. कल्पना अग्रवाल के मत में – ''हिन्दी नाटक की जडता के खिलाफ रचनात्मक संघर्ष का जो दौर मोहन राकेश ने शुरू किया था, उसे सर्वेश्वर ने आगे बढ़ाया। उन्होंने हिन्दी के नए नाटक की संभावनापूर्ण दिशा लोकनाट्यपरंपरा को जीवित किया। सर्वेश्वर एक प्रयोगधर्मी नाटककार है। नाट्य क्षेत्र में नए–नए प्रयोग कर उन्होंने अपनी नाट्यप्रतिभा का परिचय दिया।''[1] उनका लेखकीय व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा संपन्न था। एक नाटककार, उपन्यासकार और कवि के रूप में उन्होंने साहित्य में नवीन प्रयोग लाने का प्रयास किया।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में साहित्य ने काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है । उन्नीसवीं शताब्दी के शुरू होते ही जब राष्ट्रवादी विचार उभरने लगे और विभिन्न भारतीय भाषाओं का साहित्य अपने आधुनिक युग में प्रवेश करने लगा, तब अधिक से अधिक साहित्यकार साहित्य को देशभक्ति पूर्ण उद्देश्यों के लिए प्रयोग में लाने लगे। दरअसल इनमें से अधिकांश साहित्यकारों का यह विश्वास था कि चूंकि वे एक गुलाम देश के नागरिक है, अतः यह उनका कर्तव्य है कि वे इस प्रकार के साहित्य का सृजन करें जो कि उनके समाज के सर्वतोन्मुखी पुनरुत्थान में अपना योगदान देते हुए राष्ट्रीय विमुक्ति का मार्ग प्रशस्त करेगा ।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के नाटक आठवें दशक की सृष्टि हैं। इसमें भ्रष्टाचार के विरुद्ध अकेला होकर लड़ने वाले व्यक्ति का पराजय दिखाकर लेखक ने यह स्पष्ट किया है कि अकेली लडाई से समाज का कुछ बनता–बिगडता नहीं। इस नाटक के बारे में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने अपने लेख – 'गाँधीवाद' का इस्तेमाल' में लिखा है – ''इस देश की सत्ता ने सत्य की परिभाषा मान रखी है कि किसी भी असत्य को बार–बार दोहराते रहो, वह सत्य हो जाएगा। सो यह है कि गाँधी का सत्य इस गाँधीवादी देश में सत्य ही नहीं, पूरे समाज म असत्य का बोलबाला है। इसकी तकलीफ, इसी कलम से लिखी कहानी–नाटक 'लडाई' में निकली है, जहाँ सत्य के लिए लडने वाला आदमी इस समाज में 24 घण्टे भी ज़िन्दा नहीं रह पाता और इसी नतीजे पर पहुँचता है कि सत्य वह ढाल है जिसे लेकर हर जगह झूठ की लडाई लडी जा रही है।''[2] 'लडाई' का थीम समकालीन ज्वलन्त प्रश्नों में धधकता मिलता है।

नाटक में लेखक ने जिन स्थितियों को उभारा है उन्हें भूमिका दृश्य के अतिरिक्त चौदह दृश्यों के माध्यम से प्रस्तुत किया हर दृश्य सत्यवृत की सच्चाई और लडाई से जुडा हुआ है। यथार्थ से अनुप्राणित इस नाटक के भूमिका दृश्य में उद्घोषक ने समसामयिक परिस्थिति पर प्रकाश डालते हुए लड़ाई का अर्थ स्पष्ट किया है – ''आलस्य से लड़ाई

उदासीनता से लडाई, ढोंग से लडाई, जहालत से लड़ाई, गन्दगी, बदनीयती, बेईमानी से लड़ाई..लडाई खत्म नहीं हुई, ज़ारी है। गरीबी से लडाई, मानसिक गुलामी से लड़ाई, औपनिवेशिक संस्कार से लड़ाई, सामन्ती स्वभाव से लड़ाई...लडाई खत्म नहीं हुई, ज़ारी है। भाषावाद से लडाई, जातिवाद से लडाई, धर्मान्धता से लड़ाई, क्षेत्रीयता से लड़ाई... लड़ाई खत्म नहीं हुई ज़ारी है। और इस लडाई में हर आदमी अकेला आस्था और विश्वास से टूटा हुआ झूठ के विराट रेगिस्तान में अकेला। सत्य ही ईश्वर है, महात्मा गाँधी ने कहा था लेकिन कहाँ है सत्य, कहाँ है ईश्वर।''[3] संपूर्ण 'लड़ाई' पढने पर पाठकों के मन में यही निरुत्तर प्रश्न जाग उठता है। देश स्वतन्त्र हो इतने वर्ष बीत चुके फिर भी यह लडाई ज़ारी रहती है।

विश्लेषण

आज के समाज का पूरा चित्र 'लडाई' नाटक के प्रारंभ में अखबार बेचने वाले गरीब बच्चे के मुँह से निकलता है, जो वास्तव में अखबार में प्रकाशित समस्याओं के समाचारों के शीर्षकों को दुहराता ही है – ''गाँव से गाँव सूखे की चपेट में। भीषण अकाल...आदमी पेड की छाल खा–खाकर ज़िन्दा.....सांप्रदायिक दंगे, लाखों की संपत्ति स्वाहा....हरिजन ज़िन्दा जलाए गए..... दल बदल की राजनीति सरकार बदली सरकार गिरी, राष्ट्रपति शासन लागु, नक्सलवादियों और पुलिस में टकराव, बम विस्फोट, गुप्त अड्डे पकड़े गए, विद्यार्थियों पर ऑसु गैंस, पुलिस पर पथराव, विश्वविद्यालय में पुलिस, स्कूल–कॉलेज बन्द, परीक्षायें स्थगित, बसें जलाई गई, संसद और विधान सभा में हंगामा।''[4] वास्तव में यह हिसा, हंगामा, झगडे–फसाद झूठ और फरेब, बेईमानी, धोखाधडी, मक्खारी, सांप्रदायिक दंगे, हडताल, जातिवाद भोगवाद कालाबाज़ारी,घूसखोरी या यह सडता हुआ समाज सब कहीं परिव्याप्त है, फिर भी हर व्यक्ति परिस्थिति से समझोता कर जीवन यापनकर रहा है। इसकेविरुद्ध कौन लड़ेगा? इस प्रश्न का उत्तर देने हेतु 'लड़ाई' का नायक सत्यवृत तैयार हो जाता है। वह इस भ्रष्ट परिवेश व परिस्थिति के विरुद्ध धधकने वाला मध्यवर्गीय पुरुष है। जब चारों ओर भ्रष्टाचार व्याप्त देखता है तो उसके मन में व्यवस्था के प्रति आक्रोश जाग्रत होता है। वह अपनी पत्नी से कहता है – श्अब मैं सत्य से लडूँगा, न खुद कोई गलत काम करुँगा और न दूसरों को करने देता।''[5] वह हर उस आदमी से लड़ता है जो झूठ बोलता है, बेईमानी करता है और निरीह आदमी को अकारण सताता है।

सत्यव्रत शर्मा सब कहीं भ्रष्टाचार के विरुद्ध व सत्य के लिए लड़ाई कर रहा है लेकिन लोग उसे पागल ठहराकर उस पर अत्याचार करते हैं। उसे दर–दर की ठोकरों खानी पडती है। उसकी पत्नी व बच्चे भी इस लड़ाई में उसका साथ देने से इनकार कर देते हैं। सत्यव्रत अपने घर–परिवार को छोड़कर ही लडाई के मोर्चे में क्रान्ति लाने हेतु बाहर निकलता है। उसकी दृष्टि में घर, परिवार, समाज व्यवस्था, राजनीति, धर्म, अर्थक्षेत्र, संस्कृति सब कहीं झूठ और बेईमानी चल रही है। वह अपने बच्चे को स्कूल में पढ़ाना नहीं चाहता क्योंकि वहाँ भ्रष्टाचार ही भ्रष्टाचार है। वहाँ पर नई शिक्षा पद्धतियों के नाम पर जीवन के व्यावहारिक अनुभवों से अलग करने का प्रयास किया जाता है। सत्यव्रत अपने बच्चों को गलत साँचे में ढालना नहीं चाहता। मिलावट और भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति राष्ट्र हित के लिए घातक है। यह जानकर भी स्वार्थ लोग अपनी स्वार्थ पूर्ति हेतु इस भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देते रहते हैं। मंजन की शीशी पर लिखा है कि 'मसूढ़ों की रक्षा करता है' पर बरसों उसे लगाने पर भी मसूढ़े ढीले पडते जा रहे हैं। तो सत्यव्रत इसके विरुद्ध आवाज़ उठाता है – ''मैं मंजन नहीं करूँगा। कूडे में फेंकने लायक है, मैं इस कम्पनी को लिखता हूँ। इस पर जालसी का भी मुकदमा चलाऊँगा।''[6] घर में आने वाली डबलरोटी भी सडी है। सत्यवृत रोटीवाले से टकराकर उसकी बेईमानी का पोल खोल देता है तो रोटीवाला उससे भिड ही जाता है और वहाँ एकत्र हुए लोग रोटीवाला का साथ देकर सत्यवृत को समझाते हैं कि श्शरीफ आदमी है, आप। कहाँ उलझते हैं? इस तरह से उलझिएगा तो कैसे चलेगा? कहाँ तक लडिएगा? किस–किस से लडिएगा?''[7] पर सत्यव्रत अपनी बात पर अटल रहता है। रोटी बेचनेवाला बासी डबल रोटी ही बेचेगा क्योंकि लोग उसका विरोध करने के बजाय उसे चाव से खरीदते हैं।

स्कूल में शैक्षणिक मूल्यों की स्थिति यह है कि वहाँ के अध्यापक बच्चों को राष्ट्रभाषा हिन्दी की जगह अंग्रेजी भाषा को आत्मसात करने पर बल देते हैं। आधुनिक शिक्षा में व्यावहारिक ज्ञान का अभाव है। निष्ठा और समर्पण की भावना के स्थान पर नई पीढ़ी को दिग्भ्रमित और अनुशासनहीन बनाने की जालसाजी है। सत्यव्रत के अनुसार विदेशी भाषा में बच्चों को पढ़ाना, उन्हें गुलाम बनाना मात्र है। सत्यव्रत इस तरह के एक स्कूल के प्रिंसिपल से लडाई करता है, जहाँ उसका बेटा अतुल दूसरी कक्षा में पढता है। उसकी किताब किसी लड़के ने चुरा ली। बच्चे ने शिकायत हिन्दी में प्रिंसिपल से की तो प्रिंसिपल ने कहा कि 'जो कुछ कहना है अंग्रेजी में कहो।' इस पर क्रुद्ध होकर सत्यव्रत ने कहा कि अंग्रेजी में अपनी बात न कह जाने की तकलीफ आप बच्चों में जगाने चाहते हैं। प्रिंसिपल ने व्यंग्यात्मक ढंग से समझाया कि ''शिक्षा के लिए हमारे अनुशासन का अपना ढंग है। यदि आपको हमारा शासन पसन्द नहीं तो अपने बच्चे को स्कूल से हटा सकते हैं। किसी सडियल स्कूल में डाल सकते हैं, जहाँ वह आपके हिसाब से ज़्यादा तरक्की करेगा। मुझे और काम है।''[8] नई पीढ़ी को नपु ंसक बना रही शिक्षा व्यवस्था के सामने सत्यव्रत को हारना पड़ा। सत्यव्रत को अपना राशन कार्ड बनवाने के लिए महीनों दफ्तर के चक्कर लगने पडते हैं। कुछ लोग रिश्वत देकर, राशन कार्ड में चार–छह नाम ज्यादा लिखवा देते हैं। सत्यव्रत राशन के दफ्तर में जाने के लिए बस में सवार करता है तो कण्डक्टर यात्रियों से पैसा ले लेता है पर टिकट नहीं देता। कण्डक्टर का कहना है कि उसने टिकट दे दिया है। वह आदमी भी कहता है कि टिकट तो साल भर पहले ले चुका है। इन्सपेक्टर से शिकायत करने पर वह सत्यव्रत को डॉटता है – ''सरकारी कर्मचारियों के काम में बाधा डालना और उनसे लडना भी जुर्म है, यह आप जानते है?''[9] कण्डक्टर सत्यव्रत को चलती गाडी से धक्का देकर गिरा देता है।

राशन का दफ्तर भी चोरी, घूसखोरी, लाल फीताशाही और निकम्मेपन का दरबार लगा है। सत्यव्रत को राशनकार्ड बनवाने के लिए महीनों दफ्तर का चक्कर लगाना पड़ा। अन्त में इसी उद्देश्य से अब वह इस दफ्तर में आया है। यहाँ चपरासी बाहर बैठकर ऊँघ रहा है। भीतर गप्पें मारी जा रही हैं। सत्यव्रत और चपरासी के बीच के घण्टों की बहस के बाद राशन अधिकारी बाहर आता है। वह उसकी शिकायत नहीं सुनता। उसे दंगा–फसाद करनेवाला आदमी करार देता है और शिकायत लिखकर शिकायत पेटी में डाल देने को कहता है। सत्यव्रत को शिकायत पेटी पर विश्वास नहीं है क्योंकि वह शिकायत लिखकर कई बार उसमें डाल चुका है। वह आक्रोश करता है – ''शिकायत की पेटी यहाँ ताबुत है, जिसमें हर चीज़ जाकर दफ़नाने के लिए लाश में बदल जाती है। लेकिन मैं कुछ दफ़न नहीं होने दूँगा।''[10] सत्यव्रत को दफ्तर से बाहर कर दिया जाता है।

राशन के दफ्तर से लज्जित होकर सत्यर्वत लोकतन्त्र का प्रहरी अखबार 'दैनिक सत्यपथ' के कार्यालय में राशन दफ्तर की शिकायत छपवाने को आता है। संपादक उस बात को टाल देता है क्योंकि वह एक ओर राशन के अधिकारी का दोस्त है दूसरी ओर पत्रकार व्यवस्था के साथ जुड़कर चलना चाहता है। सत्यव्रत पत्रिका को झूठा और बिका हुआ कहने पर संपादक कहता है – ''यहाँ बिका कौन नहीं है? आप भी बिके हैं, हम भी बिके हैं, सारा देश बिका है। बिकना ही यहाँ टिकना है।''[11] अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाने वाला, जनजागरण लाने वाला, जनतन्त्र का मज़बूत स्तंभ अखबार भी सत्य का पक्ष न लेकर असत्य को बढावा देता है। व्यवस्था की हिमायत और झूठी प्रशंशा करता है। वहाँ से थका–मारा होकर सत्यव्रत एक सरकारी आस्पताल के फाटक

पर पहुँचता है। वास्तव में सरकारी आस्पताल गरीबों के लिए ही है। किन्तु यहाँ गरीब मरीजों को भरती नहीं दिया जाता, निर्धनों को उपेक्षा और धक्कों के सिवाय कुछ न मिलता। बड़े लोगों के लिए यहाँ सदा जगह खाली रहती है। फाटक के बाहर एक गरीब व मरणासन्न मरीज चारपाई पर इलाज तलाश कर डाक्टरी सुरक्षा के अभाव में दम तोड़ रहा है। उसकी पत्नी सिसकियाँ भर रो रही है। किसी मन्त्री का फोन आने पर उसके आदमी के आराम के लिए आस्पताल में जगह निकाली जाती है यहाँ नेताओं और धनाढ्यों को सारी सुख–सुविधायें मिलती हैं। इसी बीच बाहर के मरीज की मृत्यु हो जाती है। इसके विरुद्ध सत्यव्रत डाक्टर को भी फटकारता है तो डाक्टर के बुलाने पर फसाद खडा करने के जुर्म में पुलिस उसे डंडा जमाती हुई थाने ले जाती है। सत्यव्रत दारोगा के उपदेश का विरोध करते हुए कहता है – ''तुम सब झूठ का साथ देते हो। तुम केवल जो बडे हैं, समर्थ हैं, उनके लिए हो, जिससे कि वह तुम्हारे बल पर अपना झूठ चला सके।''[12] दारोगा के आदेशानुसार सिपाही सत्यव्रत को इक्कीस बेंत लगाकर बाहर फेंके देते हैं। यहाँ देश की दुर्व्यवस्था एवं छल–छद ्म, कपट और शोषण से ग्रस्त भ्रष्ट राजनीति का पर्दाफाश किया गया है।

सत्यव्रत पुलिस की मार खाकर सड़क पर पड़ा है। वहाँ एक तस्कर से उसकी भेंट होती है। उसको अफीम बेचने से इन्कार करने से वह उसको गरियाता है। वहीं भिखारियों की भीड़ लगी हुई है। काला बाज़ारी करनेवाले सेठ की पत्नी रोटी बाँटने आती है। सत्यव्रत भिखारियों से कहता है – ''मैं तुम्हें भीख की रोटी नहीं खाने दूँगा। यह रोटी चोर बाजारी से कमाए पैसे की है। ... भीख की रोटी मत खाओ। मेहनत मजूरी करो।''[13] भिखारी सत्यव्रत की हँसी उड़ाते हुए चले जाते हैं। आगे चाटवाले को चाट को ढककर रखने की सलाह देता है तो वह सत्यवृत से कहता है – ''आपको खाना हो तो बोलिए, कानून मत बाधारिये।''[14] यहाँ भिखारी, चाटवाला और काला बाज़ारी करनेवाला सेठ सब स्वार्थी, भ्रष्ट तथा सुविधा भोगी हैं। इसके बाद एक लड़का सत्यवृत को धक्का देकर उसकी जेब लूटकर भाग जाता है। अंततः सत्यव्रत बेहोश होकर गिर पडता है। बस्टॉप पर परीक्षा देकर आए लड़के–लड़कियों की परीक्षा में नक़ल करने, हड़ताल करके परीक्षा बन्द करवाने, घेराव, परीक्षा का बहिष्कार, आगजनी, लूटमार, तोड़–फोड़, मारतोड़ जैसे विषयों की चर्चा सुनकर सत्यव्रत ने उनको गुरु का आदर करने तथा मन लगाकर पढाई करने की सीख दी तो वे सत्यव्रत को मज़ाक उड़ाते हैं और उसके सिर पर चप्पल मारते हैं। आज छात्र समुदाय कदाचार और उद्दण्डता के पर्याय हो चुके हैं।

अब सत्यवृत थका हारा सड़क पर खडा है। उधर से गुज़रे कुछ परिचित बुद्धि जीवी लोग उसे उनके साथ सांप्रदायिक दंगों पर आयोजित एक बैठक में चलने को कहता है तो वह कहता है – ''मैं ढोंगियों की बैठक में नहीं जाता। ...आप अपने को बदले। जो दूसरों से चाहते हैं, खुद करें। ..तुम बुद्धि जीवी निकम्मे और घटिया लोग हो। शब्द, शब्द, शब्द जिसका कोई अर्थ नहीं रह गया है। चौकस शब्द अपने मतलब के लिए सतर्क। आपको कुछ कहना नहीं है, कुछ करना है।''[15] सत्यव्रत की भेंट एक गरीब से होती है, जो पाप–पुण्य, स्वर्ग–नरक और धर्म के बारे में अनभिज्ञ होकर भी 'परलोक का आश्रम' के स्वामी महेश्वरानन्द के अखण्ड कीर्तन के लिए चन्दा इकट्ठा करने में लगा है। धार्मिक पाखण्ड की आड़ में जनता की कमाई से विलासिता में मग्न रहने वाला धर्मगुरु है स्वामी। धर्म और सत्ता का गठबंधन यहाँ दृष्टव्य है। इस अखण्ड कीर्तन में साठ लाख रुपए खर्च किए जा रहे हैं। जबकि गरीब जनता भूखों मर रही है। धर्म और ईश्वर के नाम पर वह लूट रहा है भोली–भाली जनता को बद्हकाब में ला रहा है। लोगों का विश्वास है कि स्वामी पाप के नाश और आत्मा की शान्ति के लिए आए है। ''असत्य के साम्राज्य में असत्य का परिवेश असत्य से ढका रहता है। आज भारत की यही स्थिति है। उसके खिलाफ जानेवाला व्यक्ति नक्सलवादी, समाज विद्रोही, देश द्रोही, गुण्डा, चोर और बदमाश माना जाता है। जो उन दुर्गुणों से भरा है, लोग उसे डरते हैं, सम्मान देते हैं।''[16] सत्यव्रत आश्रम में जाकर महात्माओं का लिबास पहनकर जनता को छलाने वाले ढोंगी और कपटी स्वामी से कहता है – ''इस गरीब देश में आप शान्ति के लिए साठ लाख रुपए खर्च करेंगे। ....जितने का आप घी और अन्न जला देंगे उतने में स्कूल और अस्पताल खुल सकते हैं।''[17] वह धर्म को भी स्वार्थी कहता है – ''जो धर्म शंका को अनुमति नहीं देता वह धर्म नहीं है। तुम आदमी को विवेकशून्य, बेजुबान बनाकर अपने गढ़े साँचों में ढालना चाहते थे। अब धर्म के नाम पर ऐसी तानाशाही नहीं चलेगी। दूसरों की खून–पसीने की कमाई पर मौज उडाना असली पाप है। वास्तव में पापी तुम हो।''[18] इन कपट स्वामियों के खिलाफ जद्दो–जहद करने वाले आवाज़ उठाने वाले सत्यव्रत को नास्तिक और अधर्मी ठहराकर उसके चोलों द्वारा मार बाहर कर दिया जाता है। थकान, अपमान तथा बुखार से पीड़ित सत्यव्रत अब पार्क में पड़ा होता हे। वहाँ एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को छुरे से मारकर भाग जाता है।

अस्पताल में सत्यव्रत चीख–चीखकर कह रहा है कि यह अस्पताल नहीं, बुचड़ खाना है; यहाँ हत्या की जाती है। डाक्टर ने उसे पागल कहकर उसे अकेला छोड़ दिया। उसके बेड के चारों ओर परदा लगा दिया। सत्यवृत डाक्टर से कहता है – ''तुम्हारे आस्पताल से मुझे नफरत है। मैं यह बात पागलपन में नहीं पूरे होश–हवास में कह रहा हूँ। तुम सब खुशामदी हो। तुम लोगों में कहीं भी इन्सानियत नहीं है। आदमी की कीमत तुम नहीं जानते।''[19] सत्यव्रत डाक्टर से आगे कहता है – ''जो गलत है, उसे मैं गलत कहूँगा। उसके लिए लडूँगा, मुझे जीवन नहीं चाहिए, झूठ से गिरा जीवन।''[20] यह ठीक है कि अस्पताल में जो मरीज अधिक हो–हल्ला मचाता है, उसका त्रासद अन्त होता है। कभी–कभी वहाँ उसकी हत्या ही हो जाती है। सत्यव्रत के जीवन में भी ऐसा होता है। ठीक खाना व दवा न देकर उसकी हत्या की जाती है। उसके बारे में उद्घोषक कहता है – ''वह बात–बात पर चिल्लाता है। डाक्टर, नर्स कोई उसके पास नहीं फटकता था, मरीज कहते थे, ऐसे भी लोग इस दुनिया में होते हैं और बेमौत मरते हैं। मरते नहीं मार डाले जाते हैं।''[21] ''डाक्टर को भगवान का देवदूत, दयावान और स्वयं को जन कल्याण के लिए समर्पित देवता के रूप में माना जाता है। आज का चिकित्सक और चिकित्सालय जीवन देने के स्थान पर जीवन लेनेवाले बन गए हैं। यहाँ भी स्वार्थ पौलिटिक्स, आपाधापी और अन्धेरार्दी व्याप्त है।''[22] आजकल सार्वजनिक सेवाऐं बहाना बन गई हैं।

'लड़ाई' नाटक में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना देश में व्याप्त भ्रष्टाचार बेईमानी या देश की दुरवस्था के लिए सत्ता या राजनेताओं को ही उत्तरदायी ठहराता है। इस दुःस्थिति को उखाड़ फेंकने के लिए क्रान्ति का आहवान भी करता है। नाटककार के अनुसार ''सत्ता द्वारा ओढ़े गए असत्यों के विरुद्ध संघर्ष आज की अनिवार्य नियति है। अन्यथा ये असत्य धीरे–धीरे मनुष्य को खोखला करते रहेंगे, उसे मार डालेंगे।''[23] इस जन विरोधी व्यवस्था का खूनी चेहरा सदा उघाड़कर रख देने को नाटककार ने सत्यव्रत के दृढ. चरित्र को गढ़ लिया है, किन्तु उसका चरित्र हास्यास्पद होने के कारण असहज ही लगता है।

निष्कर्ष

वास्तव में सत्यव्रत की लड़ाई अकेले सत्यव्रत की नहीं है बल्कि उस गरीब की हे, जिसे लूटकर पूँजीवादी और सत्ताधारी नेतागण ऐशो आराम की ज़िन्दगी जी रहे हैं। किन्तु उल्लेखनीय बात यह है कि झूठ और भ्रष्टाचार के इस विराट और अन्तहीन रेगिस्तान में चलने का हौसला दिखाकर शोषक अकेला लड़ता है तो जीवन की हर लड़ाई में हार ही मिलेगा। यह नाटक हमें सिखाता है कि भ्रष्टाचार, अव्यवस्था तथा झूठ–फरेब के विरुद्ध सत्य की लड़ाई अकेले नहीं लड़ाई जा सकती। यह अकेली लड़ाई समाज और व्यवस्था को तोडती नहीं, स्वयं गरिमामय होते हुए भी चरमरा हो जाएगी। सत्यव्रत लड़ाई करते–करते मरकर भी अमर न हो सका और न अपने उद्देश्य में विजयी होकर व्यवस्था में

किसी प्रकार का परिवर्तन भी ला सका। अतः पूरे समाज को एकसाथ होकर सामाजिक अव्यवस्था, विसंगतियों एवं भ्रष्टता के विरुद्ध सत्य की स्थापना के लिए लड़ना चाहिए। सत्यव्रत को यदि सब झंझटों के सन्दर्भ में भीड़ का सहयोग मिला होता तो उसे उन परेशानियों का सामना न करना पड़ता और उन अपमान का घुँट न जीना पड़ता और न वह किसी मोर्चे पर पराजित होता। 'असत्यमेव जयते' के आधुनिक परिवेश में 'सत्यमेव जयते' की शानदार परंपरा हम ही पुनः प्रतिष्ठित करें।

सन्दर्भ सूची

1. जयदेव तनेजा, समसामयिक हिन्दी नाटकों में चरित्र सृष्टि, तक्षशिला प्रकाशन, सं 1989, पृ. 111
2. प्रदीप सौरभ (सं), सर्वेश्वर का रचना संसार, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 129
3. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना – लडाई, सिपि प्रकाशन, नई दिल्ली, सं 1979, पृ. 9
4. वही, पृ. 10
5. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना – संपूर्ण गद्य रचनाऐं – खण्ड दो, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, सं 1992, पृ. 51
6. वही, पृ. 72
7. वही, पृ. 56
8. वही, पृ. 56
9. वही, पृ. 58
10. वही, पृ. 60
11. वही, पृ. 61
12. वही, पृ. 64
13. वही, पृ. 65
14. वही, पृ. 67
15. वही, पृ. 68
16. अखिलेश गोस्वामी – सर्वेश्वर : व्यक्ति और रचनाकार, ज्ञान प्रकाशन, कानपुर, सं 2011, पृ. 209
17. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना – संपूर्ण गद्य रचनायें – खण्ड दो, पृ. 71
18. वही, पृ. 75
19. वही, पृ. 54
20. वही, पृ. 60
21. वही, पृ. 61
22. डॉ. के. मणिकंठन नायर – सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के गद्य में राजनैतिक व सामाजिक व्यंग्य, जवाहर पुस्तकालय,
23. मथुरा, सं 2011, पृ. 101
24. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना – सम्पूर्ण गद्य रचनायें – खण्ड दो, पृ. 62